स्त्री-पुरुष विमर्श

डॉ. मनोज कुमार सतीजा*

स्त्री और पुरुष का आर्कषण भाव आदिकाल से चला आ रहा है, इनके बीच का यह प्रेमभाव न केवल समाज में बल्कि साहित्य में भी, यर्थाथ में ही नहीं कल्पना में भी, इतिहास में ही नहीं पौराणिक इतिहास में भी निरंतर बहता हुआ समाज का निर्माण करने में योगदान दे रहा है। स्त्री का साथ पुरुष के लिए सुखद अनुभूतियों का स्रोत रहा है और पुरुष की कल्पना स्त्री में सर्वाधिक आनन्द प्राप्त कराती रही है। अनादिकाल से ही स्त्री सुकमारता, कोमलता, विनम्रता, त्याग, कर्तव्यपरायणता तथा मधुरता का जबकि पुरुष शक्ति, शौर्य एवं कठोरता का प्रतीक रहा है। महादेवी वर्मा के अनुसार ''पुरुष को यदि वृक्ष की उपमा दी जाए, जो अपने चारों ओर के छोटे-छोटे पौधों का जीवनरस चूसकर आकाश की ओर बढ़ता है तो स्त्री को ऐसी लता कहना होगा, जो पृथ्वी से बहुत थोड़ा सा स्थान लेकर अपनी सघनता में बहुत से अंकुरों को पनपाती हुई उस वृक्ष की विशालता को चारों ओर से ढक लेती है।... प्रकृति ने केवल उसके शरीर को अधिक सुकुमार नहीं बनया वरन् उसे मनुष्य की जननी का पद देकर उसके हृदय में अधिक संवेदना, आंखों में अधिक आर्द्रता और स्वभाव में अधिक कोमलता भर दी।'' स्त्री-पुरुष का यह सम्बंध ही मानव समाज की रचना करता है। उनके आपसी सहयोग, सहभाव, स्नेह व प्रेम से समाज का विकास होता है, इसलिए आज के संदर्भ में स्त्री-पुरुष विमर्श का महत्व और अधिक बढ़ जाता है।

मानव समाज की रचना का आधार स्त्री-पुरुष है, जिसकी बुनियाद उनके पारस्परिक संबंधों की पूर्णता पर टिकी होती है। स्त्री-पुरुष के बीच मजबूत आधार ही समाज को मजबूत बनाता है। लेकिन इसी संबंधात्मक संबंध में जब अहंकारी प्रवृति उत्पन्न हो जाती है, तो स्त्री-पुरुष के दाम्पत्य जीवन, पारिवारिक जीवन और सामाजिक जीवन में भी अस्थिरता उत्पन्न हो जाती है। समाज में पति-पत्नी का संबंध एक शुद्ध एवं ठोस आधार लिए रहता है। पति-पत्नी का पारिवारिक जीवन तभी सुखी और संतोषजनक हो सकता है, जब पति-पत्नी में परस्पर स्नेह, सहयोग, आत्मविश्वास, विश्वास व प्रेम की भावना हो। पति-पत्नी का संबंध भारतीय धर्म और संस्कृति में पवित्रता के उच्च शिखर पर आसीन रहा है। पति-पत्नी वह केन्द्रीय संबंध है, जहाँ से अन्य सभी संबंध शुरू होते हैं। पति-पत्नी गाड़ी के दो पहिए के समान हैं। यदि गाड़ी के दोनों पहिए ठीक हों तो मंजिल आसानी से मिल जाती है। यदि पति-पत्नी के संबंधों में मधुरता, प्यार, विश्वास है तो जीवन की नैया आराम से पार हो जाती है। यदि इसमें कड़वाहट आ जाती है तो नैया भव-सागर के बीच में डूब जाती है। समाज की यही बुनियाद ही दूषित एवं विघटित हो जाए तो सभ्य समाज की परिकल्पना ही नगण्य हो जाती है। समाज में स्त्री-पुरुष की अहंकार की भावना, अपने अधिकारों की प्राप्ति, व्यक्तिगत स्वतंत्रता व अस्तित्व की होड़ में दोनों एक-दूसरे को आदर व सम्मान नहीं दे पाते, जिसका एक कारण परंपरागत वह मानसिकता भी होती है जो एक लड़का-लडकी के बीच में मतभेद उत्पन्न करने में मुख्य भूमिका अदा करती है। वास्तव में लड़के व लड़कियों के विचारों में मतभेद का मुख्य कारण केवल तत्कालीन परिवेश व परिस्थितियां ही जिम्मेवार नहीं होती हैं, अपितु इनके मतभेदों की नींव के बीज बचपन से ही पारिवारिक व सामाजिक सोच व परम्परा के परिणाम स्वरूप उन पर पड़ने लगते हैं। अतीत से लेकर आधुनिक काल तक अर्थ सर्वोपरि रहा है। अर्थ आज तक

* हिन्दी विभाग, स्कूल ऑफ ओपन लर्निंग, दिल्ली विश्वविद्यालय।

पुरुषों के हाथों में रहा है और रहेगा भी। महिलाएं नौकरी करके पैसा तो कमाती हैं, लेकिन उस पर भी पुरुष का अधिकार है। इस पितृसत्तात्मक समाज में आज तक किसी ने भी इस ओर नहीं सोचा कि पुरुषों के साथ-साथ समाज में महिलाओं का भी अर्थ पर कुछ अधिकार होना चाहिए, उसकी भी अपनी कुछ इच्छाएं होती हैं। परिवार के मुख्य विषयों पर निर्णय लेने का एकाधिकार आज भी पुरुषों को ही दिया जाता है। एक लड़की ने कितने ही अथक प्रयासों से नौकरी प्राप्त की हो, संतान उत्पन्न होने पर पुरुष वर्ग तनिक भी देरी नहीं करता अपनी पत्नी को यह कहने में कि वह घर को संभाले, नौकरी भले ही छोड़ दे। परिवार द्वारा बाल्यकाल से एक लड़के के मन में यह मानसिकता भर देना कि वह लड़का है तो लड़कियां उससे कुछ कम हैं, उसे लड़की की तुलना में अधिक स्वतंत्रता प्रदान करना, अधिक महत्व देना, और स्त्री-सुरक्षा का भार उसके कंधों में डालने के कारण लड़के के मन में अहंकार की मानसिकता उत्पन्न होने लगती है। इसके उदाहरण परिवार में भी दिखने लगते हैं, जब एक छोटा भाई बड़ी बहन को अनुचित-उचित का पाठ पढ़ाने लगता है।

विवाह की अवस्था पर पहुंचने तक पारिवारिक व सामाजिक रूढ़िवादी और परंपरागत मानसिकता का अभाव उसके जीवन पर इतना अधिक पड़ चुका होता है, जिसके बंधन से निकलना सम्भव नहीं होता। अधिकांश लड़कों के मन में यह भावना स्थिर हो चुकी होती है कि विवाह के बाद उसके द्वारा अपने घर में लाई गई लड़की का मुख्य दायित्व उसके परिवार के प्रति ही है चाहे उसका और उसके परिवार का व्यवहार जैसा भी हो अपने अस्तित्व का त्याग, अपनी भावनाओं का त्याग, अपनी महत्वाकांक्षाओं का त्याग उस नवविवाहिता को ही करना पड़ेगा। अपने पुरुषत्व में भले ही कितनी ही खामियां हों, किन्तु लड़की उसे सर्वगुण सम्पन्न चाहिए। धीरे-धीरे उसकी यही मानसिकता स्त्री को एक सम्पत्ति के रूप में स्वीकार करने लगती है। उसके अनुसार वही सुकन्या है जो उसके कथन के अनुसार ही सारे कार्य करे। उसका व उसके माता-पिता के हर उचित व अनुचित बात का समर्थन करे, गृहकार्य में पूर्णतः निपुण हो, साथ ही व्यावहारिकता में भी पूरी तरह से सम्पूर्ण हो, देखने में किसी नायिका से कम न हो, उसकी पत्नी एक आदर्श पतिव्रता तो हो ही, साथ ही वह आधुनिकता से पूरी तरह परिचित भी हो। इस प्रकार पितृसत्तात्मकता की मानसिकता से प्रभावित विवाह से पहले ही लड़के के मन में अपने लिंग को लेकर अहम की भावना तो बनी रहती है। यह अलग बात है कि यह भावना किसी में अत्यधिक, किसी में अधिक और किसी में बहुत कम होती है। यह विडम्बना ही है कि एक लड़के की मानसिकता स्त्री को लेकर बहन, माँ और पत्नी के संदर्भ में अलग-अलग दिखाई पड़ती है। पत्नी पर अपना पूर्णतः अधिकार समझता है। यह अधिकार कई बार सीमाओं को लांघ जाता है। किन्तु उसके अपने लिए कोई नियम व सीमाएं नहीं हैं, वह इस बात को नहीं समझ पाता कि यदि पत्नी उसके घर में आते ही परिवार की कोई समस्या उससे साझा करने का प्रयास कर रही है, तो उसका वह एकांकीपन पूरे दिन प्रतीक्षा की उत्सुकता होती है, जिसकी वह उसके आने की प्रतीक्षा करते हुए बिताती है। लेकिन वह उसे चुगली या निंदा का नाम दे देता है और पत्नी निरंतर उस तनाव की मानसिकता को अपने सहयोगी जीवनसाथी के साथ बांटने में पूर्णतः असफल हो जाती है। इस प्रकार एक तनाव का वातावरण उत्पन्न होने लगता है, अपने सगे सम्बंधियों के प्रति दोनों का अति संवेदनशील होना भी मतभेदों को बढ़ावा देता है।

एक दूसरे के लिए समय न निकालना भी स्त्री-पुरुष के संबंधों में बिखराव का कारण बन जाता है, इसलिए यह आवश्यक है कि आज का युवा वर्ग पुरुष इस बात को समझ लें कि वह पत्नी के रूप में एक ऐसी जीवनसाथी लाया है, जिसने उसके साथ वर्षो का सफर करना है। वह कोई सम्पत्ति नहीं लाया है, जिस पर वह समय-समय अपना

मालिकाना हक प्रकट करता रहे। जहाँ एक ओर समाज का युवक वर्ग युवतियों के प्रति अपने पारिवारिक दबाव से ग्रस्त होता है, वहीं दूसरी ओर स्त्रीवर्ग पर यह दबाव कहीं गहरा होता है। परिवार में बचपन से ही लड़की को यह समझाना आरंभ कर दिया जाता है कि वह पराया धन है, उसका वास्तविक घर यह नहीं बल्कि वह है, जिस घर में विवाह के पश्चात वह जाएगी। उसे हर स्थिति में घरेलू गतिविधियों में अपना पूरा योगदान देना पड़ेगा, उसके लिए खाना पकाना, बच्चों की देखभाल करना, घर को व्यवस्थित रखना, अपने सास-ससुर को हर हाल में खुश रखना, विवाह के उपरांत भले ही कोई भी स्थिति क्यों न हो, समझौते के लिए तैयार रहना, पति को परमेश्वर समझना आदि उसकी प्राथमिकता होगी। उसका अपना अस्तित्व, उसका अपना जीवन इन सबका कोई महत्व नहीं है। परम्परागत भारतीय समाज में इसी मानसिकता के साथ एक लड़की के जीवन को विकसित किया जाता है, भले ही आज की आधुनिक शिक्षित लड़की इन सभी बातों को पूरी तरह मानने को तैयार नहीं है। उसकी अपनी महत्वाकांक्षाएं हैं, अपनी इच्छाएं हैं, वह अधिकारों में समानता चाहती है, वह स्वतंत्रता चाहती है, वह किसी प्रकार के बंधनों में बंधना नहीं चाहती, किन्तु पारिवारिक और सामाजिक दबाव उसके विरोधों को कार्यवत् नहीं करने देता है और अधिकांश अपनी महत्वकांक्षाओं को परिवार के दायित्व के दबाव में दबा लेती हैं, जबकि ऐसी स्थिति में न आने के लिए वह अपने कैरियर के प्रति भी पूरी निष्ठा से दायित्व निभाती हैं, ताकि उसे सुखमय जीवन प्राप्त हो सके। वह अपने भावी पति के रूप में एक ऐसा वर चाहती है जो उसे जीवन भर प्रेम करे, सदैव उसका ध्यान रखे, उसकी इच्छाओं व भावनाओं का मान रखे। साथ-साथ उसके मान-सम्मान को लेकर सचेत रहे। वह चाहती है कि जिसके लिए वह अपने माता-पिता को छोड़कर आई है, वह नई परिस्थितियों में सदैव उसके साथ जीवनसाथी के रूप में सहयोग देता रहे। वह घर और बाहर दोनों स्थितियों को संभालने के लिए तैयार है, किन्तु उसे अधिकार, समानता व स्वतंत्रता भी चाहिए। एक पत्नी के रूप में कोई भी लड़की उन परिस्थितियों के लिए अपने आप को तैयार नहीं कर पाती, जब उसका पति उसके सही होने पर भी उसका साथ न देकर अपनी माँ या परिवार के सदस्यों का साथ दे। वह उन स्थितियों में भी दुविधाग्रस्त हो जाती है, जहाँ उसकी इच्छाओं के सामने परिवारिक दायित्व आ जाते हैं, अथक प्रयासों से प्राप्त सरकारी नौकरी को भला वह कैसे छोड़ दे? क्योंकि ससुराल वाले चाहते हैं वर्षो से सजाए अपने स्वप्नों को वो कैसे कुछ वर्ष पहले स्थापित बंधनों के लिए तोड़ दे, केवल इसलिए क्योंकि वह एक लड़की है? इन सभी समस्याओं से टकराने के लिए अपनी इच्छाओं, महत्वाकांक्षाओं को पूर्ण करने के लिए, अपने अस्तित्व और अस्मिता को बनाए रखने के लिए वह एक ऐसे साथी पुरुष को जीवनसाथी के रूप में साथ चाहती है, जो कदम-कदम पर उसका साथ दे।

अपने लिए योग्य पुरुष के आर्कषण से अधिक आत्मीयता, स्नेह, प्रेम, विश्वास के भाव चाहती है ताकि उसका जीवन सुखमय हो सके। वह उसमें वह अधिकार और स्वतंत्रता भी ढूंढ़ती है, जिसकी अभिलाषा उसके मन में एक पति के रूप में विवाह से पूर्व रही है। वह पुरुष के विरुद्ध संघर्ष का बिगुल बजाना नहीं चाहती न ही वह घर-गृहस्थी की दीवारों में दरारें डालना चाहती है, वह तो बस पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक सभी परिस्थितियों में अपने जीवनसाथी के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने की समानता चाहती है। यह तभी संभव हो सकता है, जब युवक और युवतियाँ दोनों एक-दूसरे को मान व सम्मान दें, एक-दूसरे की इच्छाओं, भावनाओं और संवेदनाओं को समझने की मानसिकता को विकसित करने का समय दें ताकि एक सुदृढ़ परिवार और समाज की स्थापना हो सके। स्त्री-पुरुष विमर्श से उन विसंगतियों को विराम मिलेगा जो युवक और युवतियों की मानसिकता को बार-बार द्वन्द की स्थिति में डाल देती है।

*****